श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः
परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः
परधर्मो भयावहः
॥३५॥

श्रेयान् – अधिक

श्रेयस्कर; स्वधर्मः –

अपने
नियतकर्म; विगुणः –
दोषयुक्त भी; पर-
धर्मात् – अन्यों के लिए
उल्लेखित कार्यों की
अपेक्षा; सू-अनुष्ठितात् –
भलीभाँति सम्पन्न; स्व-

धर्मे – अपने नियत्कर्मों में; निधनम् – विनाश, मृत्यु; श्रेयः – श्रेष्ठतर; पर-धर्मः– अन्यों के लिए नियतकर्म; भय-

आवहः – खतरनाक, डरावना |

Text

अपने नियतकर्मों को दोषपूर्ण ढंग से सम्पन्न करना भी अन्य के कर्मों को भलीभाँति करने से श्रेयस्कर है | स्वीय कर्मों को करते हुए मरना पराये कर्मों में प्रवृत्त

होने की अपेक्षा श्रेष्ठतर है, क्योंकि अन्य किसी के मार्ग का अनुसरण भयावह होता है।

“आपने कहा की हमें अपनी प्रकृति से निर्मित रागद्वेषमयी पश्वादि साधारणी प्रवृति को त्याग कर शास्त्रोक्त धर्म में वर्तमान होना चाहिए |

यह प्रवृति धर्म आचरण करने के द्वारा हृदय शुद्ध

होने से निवृत हो जानी चाहिए |युद्ध और अहिंसा इन दोनों धर्मों का वर्णनन शास्त्रों में है | क्योंकि युद्ध करने के धर्म को मैं राग और द्वेष के बिना सम्पादित नहीं कर सकता हूँ इसलिए अहिंसा रुपी धर्म जिसमे

भिक्षाटन के द्वारा जीवन धारण करना होता है वह मेरे लिए युद्ध करने की अपेक्षा श्रेयस्कर होगा |”

जो भी धर्म वेद में वर्ण और आश्रम के अनुसार वर्णित है, यद्यपि वह पूर्ण रूप से संपादित न

भी हो पाए क्योंकि उसके कुछ अंग पूर्ण नहीं हो पाए हैं (विगुणः) फिर भी वह दूसरों के धर्म का सम्पादन करने से श्रेष्ट है यद्यपि वह पर धर्म सारे अंगों के साथ संपादित ही क्यों न हुआ हो (स्वनुष्ठितात)|

उदारण के लिए ब्राह्मण का स्वाभाविक धर्म अहिंसा है और क्षत्रिय का हिंसा| वेद की मान्यता के परे किसी को भी धर्म आचरण नहीं

करना चाहिए | ऐसा करना वैसा होगा जैसा आँखों की क्रिया को किसी अन्य अंग से करना| जैमिनी का कथन है : चोदना-लक्षणो धर्मः अर्थात धर्म का लक्षण है नियम |

अपने धर्म का पालन करना क्यों श्रेष्ट है उसको फिर कहा जा रहा है | अपने धर्म के आचरण को करते हुए मृत्यु को प्राप्त हो जाना श्रेष्टतर है | यह सर्वश्रेष्ट फल देने वाला होता है

क्योंकि इसमें अपूर्णता

के कारण कोई पाप के द्वारा क्षति नहीं है और क्योंकि अगले जन्म में वह इस धर्म का आचरण ठीक से कर पायेगा।

दूसरे का धर्म करने से दुर्भाग्य का निर्माण होता है क्योंकि इसमें

पाप सृष्टी होती है और क्योंकि यह शास्त्र के द्वारा निषेधित है |

परशुराम और विश्वामित्र के सम्बन्ध में कोई व्याभिचार नहीं है | यद्यपि परशुराम और विश्वामित्र क्रमश:

ब्राह्मण और क्षत्रीय कुल में जन्म लिए थे फिर भी उन्होंने अपने महान गुणों के द्वारा कर्म संपादित किये | तथापि उनकी निँदा हुई और उनको कष्ट हुआ | साथ ही द्रोण इत्यादि को क्षत्रिय धर्म के अभ्यास

करने के कारण की बार निन्दित होना पड़ा |

"परन्तु मैंने सुना है की दैवराती इत्यादि क्षत्रियों ने जगत का त्याग किया था इसलिए अहिंसा को मेरे लिए

परधर्म क्यों मन जाएगा ?”

“ अपने पूर्व आश्रम के नियत कर्मों को करने से व्यक्ति वासनाओं को तब तक क्षीण करता है जब तक वह वैराग्य के लिए योग्य नहीं हो जाता |

उसके उपरान्त व्यक्ति अहिंसा का पालन कर पाता है क्योंकि तब वही उसका नियत कर्म हो जाता है तो इसलिए तब अपने नियत धर्म में स्थित व्यक्ति के लिए अहिंसा का पालन करना उचित होता है।"

नोट: दैवराती महाराज जनक का ही एक और नाम है | वृद्धा अवस्था में उन्होंने संन्यास ले लिया था यद्यपि सामान्यत: क्षत्रिय संन्यास न लेकर वानप्रस्थ को स्वीकार करते हैं |

Purport

अतः मनुष्य को चाहिए कि वह अन्यों ले लिए नियत्कर्मों की अपेक्षा अपने नियत्कर्मों को कृष्णभावनामृत में करे | भौतिक दृष्टि से नियतकर्म मनुष्य की

मनोवैज्ञानिक दशा के अनुसार भौतिक प्रकृति के गुणों के अधीन आदिष्ट कर्म हैं | आध्यात्मिक कर्म गुरु द्वारा कृष्ण की दिव्यसेवा के लिए आदेशित होते हैं | किन्तु

चाहे भौतिक कर्म हों या आध्यात्मिक कर्म, मनुष्य को मृत्युपर्यन्त अपने नियत्कर्मों में दृढ रहना चाहिए | अन्य के निर्धारित कर्मों का अनुकरण नहीं करना चाहिए | आध्यात्मिक

तथा भौतिक स्तरों पर ये कर्म भिन्न-भिन्न हो सकते हैं, किन्तु कर्ता के लिए किसी प्रमाणिक निर्देशन के पालन का सिद्धान्त उत्तम होगा | जब मनुष्य प्रकृति के गुणों के वशीभूत हो तो

उसे उस विशेष अवस्था के लिए नियमों का पालन करना चाहिए, उसे अन्यों का अनुकरण नहीं करना चाहिए | उदारणार्थ, सतोगुणी ब्राह्मण कभी हिंसक नहीं होता, किन्तु

रजोगुणी क्षत्रिय को हिंसक होने की अनुमति है | इस तरह क्षत्रिय के लिए हिंसा के नियमों का पालन करते हुए विनष्ट होना जितना श्रेयस्कर है उतना अहिंसा के नियमों का पालन करने वाले

ब्राह्मण का अनुकरण नहीं | हर व्यक्ति को एकाएक नहीं, अपितु क्रमशः अपने हृदय को स्वच्छ बनाना चाहिए | किन्तु जब मनुष्य प्रकृति के के गुणों को लाँघकर कृष्णभावनामृत में

पूर्णतया लीन हो जाता है, तो वह प्रामाणिक गुरु के निर्देशन में सब कुछ कर सकता है | कृष्णभावनामृत की पूर्ण स्थिति में एक क्षत्रिय ब्राह्मण की तरह और एक ब्राह्मण क्षत्रिय की

तरह कर्म कर्म कर सकता है | दिव्य अवस्था में भौतिक जगत् का भेदभाव नहीं रह जाता | उदाहरणार्थ, विश्वामित्र मूलतः क्षत्रिय थे, किन्तु बाद में वे ब्राह्मण हो गये | इसी

प्रकार परशुराम पहले ब्राह्मण थे, किन्तु बाद में वे क्षत्रिय बन गये | ब्रह्म में स्थित होने के कारण ही वे ऐसा कर सके, किन्तु जब तक कोई भौतिक स्तर पर रहता है, उसे प्रकृति के गुणों के

अनुसार अपने कर्म करने चाहिए | साथ ही उसे कृष्णभावनामृत का पुरा बोध होना चाहिए |